International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Volume 6 Issue 4, May-June 2022 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

भारतीय दलीय व्यवस्था: बदलता स्वरूप एवं आयाम

Dayachand
Assistant Professor in Political Science, Babu Shobha Ram Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

सार

लोक-राज राजनीतिक दलों की महानता है। लोकतंत्र में, लोगों को भाषण देने, अपने विचार व्यक्त करने, उन्हें प्रकाशित करने, सरकार की आलोचना करने आदि की स्वतंत्रता दी जाती है। इसीलिए राजनीतिक दलों का उभार स्वाभाविक है। सरकार की संसदीय प्रणाली, जिसे भारत में अपनाया गया है, बिना राजनीतिक दल के कार्य नहीं कर सकती है और इसे पार्टी प्रशासन भी कहा जाता है।

जब अमेरिकी संविधान का मसौदा तैयार किया गया था, तो वहां के लोगों ने राजनीतिक दलों की कल्पना नहीं की थी, लेकिन जल्द ही उन्होंने वहा के प्रशासन जगह बना लिया। हमारे देश भारत में भी कई राजनीतिक दल है, जिनमें से कुछ स्वतंत्रता से पहले भी मौजूद थे, लेकिन अधिकतर दल स्वतंत्रता के बाद ही राजनीति में आए।कुछ दल राष्ट्रीय स्तर के हैं, और कुछ क्षेत्रीय स्तर तक ही सीमित हैं। राष्ट्रीय स्तर की राजनीतिक पार्टियों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, मार्क्सवादी पार्टी, राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी, तृणमूल कांग्रेस पार्टी और बहुजन समाज पार्टी हैं, जबकि मुख्य क्षेत्रीय दल शिरोमणि अकाली दल, नेशनल कॉन्फ्रेंस, तेलुगु देशम, इंडियन नेशनल लोकदल, समाजवादी पार्टी और असम गण परिषद जैसे दल है। वर्तमान युग लोकतंत्र का युग है। लोकतंत्र के लिए पार्टियां आवश्यक और अपरिहार्य हैं। राजनीतिक दल नागरिकों के एक समूह हैं जो जनमत संग्रह के मामलों पर समान विचार साझा करते हैं और एकजुट होकर सरकार पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाहते हैं ताकि वे सिद्धांतों को लागू कर सकें।राजनीतिक दलों के बिना, एक लोकतांत्रिक सरकार कार्य नहीं कर सकती है और लोकतांत्रिक सरकार के बिना, राजनीतिक दल विकसित नहीं हो सकते हैं।

मुनरो ने कहा था "लोकतंत्र एक राजनीतिक पार्टी का दूसरा नाम है," भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इसलिए भारत में राजनीतिक दलो का विकास इंग्लैंड, अमेरिका और अन्य पश्चिमी देशों के जैसे नहीं हो पाया। भारत में राजनीतिक दल जन्म एक लोकतांत्रिक शासक वर्ग को बढ़ावा देने के लिए नहीं हुआ, बल्कि एक विदेशी साम्राज्य के खिलाफ राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन शुरू करने के लिए हुआ।

राष्ट्रीय कांग्रेस न केवल राष्ट्रीय आंदोलन को चलाने के लिए पैदा हुई थी, बल्कि भारतीय समाज से उन तत्वों को मिटाने के लिए थी जो सामाजिक प्रगति में बाधा डाल रहे थे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना 1885 में हुई थी।कांग्रेस के बाद 1906 में मुस्लिम लीग का गठन हुआ। अखिल भारतीय हिंदू महासभा की स्थापना 1916 में हुई थी। आजादी के बाद कई राजनीतिक दलों का गठन किया गया। जब 1952 में पहला आम चुनाव हुआ था, तब 14 राष्ट्रीय दल और लगभग 50 राज्य स्तर के दल थे।

How to cite this paper: Dayachand "The Indian Party System: Changing Forms and Dimensions" Published in International Journal of Trend in Scientific Research and Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-6 | Issue-4, June 2022, pp.1626-1634, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd50352.pdf

IJTSRD50352

Copyright © 2022 by author(s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development Journal. This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

परिचय

1957 के आम चुनावों में, चुनाव आयोग ने उन दलों को अखिल भारतीय राजनीतिक दलों के रूप में मान्यता दी जिन्होंने पहले चुनावों में कुल मतों का कम से कम 3% हासिल किया था। इसलिए, केवल 4 दलों कांग्रेस, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी, समाजवादी दल और जनसंघ को सर्वोच्च राजनीतिक पार्टी के रूप में मान्यता दी गई थी। 1962 में, स्वतंत्र पार्टी को सर्वोच्च राजनीतिक पार्टी के रूप में भी मान्यता दी गई थी। 29 अगस्त 1974 को सात दलों ने भारतीय लोक दल का गठन किया।जनवरी 1977 में, जनता पार्टी का गठन चार राजनीतिक दलों – जनसंघ, पुरानी कांग्रेस, भारतीय लोक दल, समाजवादी पार्टी और विद्रोही नेताओं द्वारा किया गया था। जनता पार्टी का औपचारिक रूप से गठन 1 मई 1977 को किया गया था।

जनवरी 1978 में कांग्रेस विभाजित हो गई और पार्टी कांग्रेस की स्थापना हुई। और जुन , 1979 में पार्टी कांग्रेस भी विभाजित हो गई और देव राज अरस के नेतृत्व में एक नई पार्टी का गठन किया गया। पर जल्दी ही स्वर्ण सिंह कांग्रेस और अरस कांग्रेस का विलय हो गया और देव राज अरस को कांग्रेस अध्यक्ष बना दिया गया।इसलिए कांग्रेस को अरस कांग्रेस कहा जाने लगा। 1 जुलाई, 1979 को जनता पार्टी का विभाजन हुआ और लोकदल, या जनता(s), का गठन हुआ। अक्टूबर 1984 में, दलित मजदूर किसान पार्टी का गठन किया गया था। दिसंबर 1984 के लोकसभा चुनावों के दौरान, चुनाव आयोग ने सात राजनीतिक

दलों को राष्ट्रीय दलों के रूप में मान्यता दी।1988 में, एक नई पार्टी, जनता दल का गठन किया गया। वर्तमान में, चुनाव आयोग ने राष्ट्रीय स्तर पर 7 राजनीतिक दलों और क्षेत्रीय स्तर पर 58 राजनीतिक दलों को मान्यता दी है।अन्य देशों के राजनीतिक दलों की तरह, भारतीय पार्टी प्रणाली की अपनी विशेषताएं हैं, जिनमें से मुख्य हैं: –

1. बहुदलीय प्रणाली (Multi Party System)-

भारत में स्विट्जरलैंड की तरह ही बहुदलीय व्यवस्था है। मई 1991 के लोकसभा चुनावों के अवसर पर, चुनाव आयोग ने नौ राजनीतिक दलों को राष्ट्रीय दल के रूप में मान्यता दी और उन्हें चुनाव चिन्ह आवंटित किए।ये दल इस प्रकार हैं – कांग्रेस (आई), कांग्रेस (एस), बी.जे.पी, जनता दल, जनता दल (एस), लोक दल, जनता पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और मार्क्सवादी पार्टी। 22 फरवरी, 1992 को चुनाव आयोग ने तीन राष्ट्र स्तर की दल, जनता दल (एस), लोकदल और कांग्रेस (एस) की मान्यता रद्द कर दी।

इस प्रकार, चुनाव आयोग ने 6 राष्ट्रीय स्तर के दलों को मान्यता दी। 23 दिसंबर 1994 को चुनाव आयोग ने समता पार्टी को एक राष्ट्रीय राजनीतिक दल के रूप में मान्यता दी। 25 दिसंबर, 1997 को चुनाव आयोग ने बहुजन समाज पार्टी को राष्ट्रीय पार्टी के रूप में मान्यता दी।[1]

वर्तमान में, चुनाव आयोग ने सात राष्ट्रीय दलों को मान्यता दी है। राष्ट्रीय दलों के अलावा, कई अन्य राज्य स्तर और क्षेत्रीय दल हैं।क्षेत्रीय दलों में पंजाब में शिरोमणि अकाली दल, हरियाणा में इंडियन नेशनल लोक दल, जम्मू-कश्मीर में नेशनल कॉन्फ्रेंस , असम में असम गण परिषद, तमिलनाडु में अन्ना डी.एम.के,आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम, केरल कांग्रेस और केरल में मुस्लिम लीग, महाराष्ट्र में रिपब्लिकन पार्टी, शिवसेना और किसान मजदूर पार्टी, गोवा में महाराष्ट्रवादी गोमांतक पार्टी, नागालैंड में नागा राष्ट्रीय परिषद और सिक्किम में डेमो क्रेटिक फ्रंट वर्णनात्मक हैं।वर्तमान में, चुनाव आयोग ने 58 दलों को राज्य स्तरीय दलों के रूप में मान्यता दी है। आर.ए.गुपाला स्वामी के अनुसार, भारत में दलों की संख्या इतनी बड़ी है कि यह न केवल लोकतांत्रिक संस्थानों के लिए हानिकारक है, बल्कि भारतीय लोकतंत्र के अस्तित्व के लिए भी हानिकारक है।एक बहुदलीय प्रणाली संसदीय प्रणाली के लिए खतरनाक है,क्योंकि यह राष्ट्रीय एकता को कमजोर कर सकती है। संकटकल के समय ज्यादा दलों के कारण राष्ट्रीय एकता हासिल नहीं की जा सकी । स्थायी शासन के लिए केवल 2-3 दल होने चाहिए। बहुदलीय व्यवस्था के कारण शासन स्थिर नहीं है। 1967 के चुनावों के बाद, कई राज्यों में शासन में तेजी से बदलाव हुए और कई राज्यों में राष्ट्रपति शासन लागू करना पड़ा।

2. एक पार्टी के प्रभुत्व का अंत (End of one Party Dominance)-

भारत में बहुदलीय प्रणाली पश्चिम देशों की बहुदलीय प्रणाली, जैसा कि फ्रांस में है इस से बहुत अलग है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में कई दल चुनावों में भाग लेते हैं, लेकिन 1977 से पहले केंद्र और राज्यों में कांग्रेस का वर्चस्व था।कांग्रेस ने क्रमशः 1952, 1957, 1962 और 1967 में क्रमशः 364,371,361 और 283 सीटें जीतीं। 1967 में कांग्रेस को ज्यादा सफ़लता न मिली जिसके कारण कई राज्यों में गैर-कोंग्रेसी मंत्री मंडल बने ,पर वह इतने मुर्ख थे की उन्होंने इस सुनहरे मौके का पूरा फायदा उठाने के बजाए अपना नुकसान ही किया। उन्होंने लोगों का भला न करके अपना स्वार्थ पूरा करने की कोशिश की।इसलिए गैर-कांग्रेसी सरकारें लंबे समय तक न चल सकीं। श्रीमती इंदिरा गांधी ने 1971 में मध्य-कालीन चुनाव कराए जिसमें इंदिरा कांग्रेस इतनी सफल प्राप्त हुई कि कांग्रेस पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली हो गई। लोकसभा में कांग्रेस ने 352 सीटें जीत प्राप्त हुई। 19 राज्यों में से 8 राज्यों की विधान सभाओं के लिए भी चुनाव हुए और इन सभी राज्यों में कांग्रेस को भारी बहुमत मिला। एक दल की अध्यक्षता लोकतंत्रीय-विरोधी होती है, क्योंकि एक दल की अध्यक्षता के कारण दूसरे दल विकसित नहीं हो सकते है। लेकिन जनता पार्टी की स्थापना के कारण कांग्रेस का एकाधिकार थोड़े समय के लिए समाप्त हो गया। मार्च 1977 के लोकसभा चुनावों में, कांग्रेस ने केवल 153 सीटें पर जीत प्राप्त की जबकि जनता पार्टी ने 300 सीटें पर जीत प्राप्त हुई।

इस प्रकार पहली बार केंद्र में एक गैर-कोंग्रेसी सरकार का गठन हुआ। इसी तरह, जून 1977 में हुए 10 राज्यों के चुनावों में 7 राज्यों में जनता पार्टी को भारी बहुमत मिला। (हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार और उड़ीसा) जबकि पंजाब में, अकाली दल और जनता पार्टी ने गठबंधन सरकार बनाई।इस प्रकार, 10 राज्यों में से किसी में भी कांग्रेस की सरकार नहीं थी, जबकि चुनावों से पहले, तमिलनाडु को छोड़कर सभी राज्यों में कांग्रेस की सरकार थीं।लेकिन जनता पार्टी पांच साल तक शासन नहीं कर सकी। जुलाई 1979 मे जनता पार्टी के कई महान सदस्यों ने पार्टी छोड़ दी और लोक दल का गठन किया।प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई को इस्तीफा देना पड़ा। जनवरी 1980 के लोकसभा चुनावों में कांग्रेस (आई) को बड़ी सफलता मिली। कांग्रेस(आई) ने 1980 से 1989 तक शासन किया,पर नवंबर 1989 के चुनावों में कांग्रेस (आई) की हार हो गई। नवंबर 1989 और फरवरी, 1990 के विधानसभा चुनावों के बाद कांग्रेस (आई) ने अपनी प्रधनता गंवा ली।1991 के लोकसभा चुनावों के बाद कांग्रेस ने केंद्र में एक अलप संख्यक सरकार बनाई। नवंबर 1993 में पांच राज्यों और दिल्ली विधानसभा के लिए चुनाव हुए। कांग्रेस को केवल हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश और मिजोरम में सफल मिली। नवंबर-दिसंबर, 1994 और फरवरी-मार्च, 1995 में 10 राज्यों में विधानसभा चुनाव हुए, जिसमें कांग्रेस को भारी हार का सामना करना पड़ा। कांग्रेस केवल उड़ीसा, गोवा, मणिपुर और अरुणाचल प्रदेश में सफल मिली। अप्रैल-मई 1996 के लोकसभा चुनावों में, कांग्रेस को करारी हार का सामना करना पड़ा। इन चुनावों में, पार्टी को ऐतिहासिक हार का सामना करना पड़ा और उसने 140 सीटें जीतीं।

सितंबर-अक्टूबर 1996 में जम्मू-कश्मीर और उतर प्रदेश राज्य और फ़रवरी 1997 में पंजाब राज्य की विधानसभा चुनावों में कांग्रेस को भारी नुकसान उठाना पड़ा। लोकसभा चुनावों के अलावा, कांग्रेस को हरियाणा, असम, केरल, तमिलनाडु और पांडिचेरी में भी भारी हार का सामना करना पड़ा। फरवरी-मार्च, 1998 के लोकसभा चुनावों में किसी भी पार्टी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला और भारतीय जनता पार्टी और उसके

सहयोगियों ने सरकार बनाई। अप्रैल-मई 2014 में हुए 16 वें लोकसभा चुनावों में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन को पूर्ण बहुमत मिला। इतना ही नहीं, देश में पहली बार कांग्रेस के अलावा किसी विभिन्न पार्टी को पूर्ण बहुमत मिला। आज राज्यों में विभिन्न दलों की सरकारें हैं। कांग्रेस ने अपनी प्रधनता को खो दिया।[2]

3. प्रमुख और ताकतवर विपक्ष का उदय (Rise of Effective Opposition)-

भारतीय पार्टी प्रणाली की एक और विशेषता यह है कि यहाँ संगठित और प्रभावी विपक्षी पार्टी की कमी रही है। सर आइवर जेनिंग्स लिखते हैं कि "विपक्ष के बिना लोकतंत्र को लोकतंत्र नहीं कहा जा सकता।

संसदीय लोकतंत्र में विपक्ष उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि सत्ता पक्ष या सरकार। निस्संदेह, संसदीय सरकार में एक संगठित विपक्षी पार्टी का होना बहुत ज़रूरी है ताकि विपक्ष सत्ताधारी दल को अनुचित काम करने से रोक सके और उसे कुशलतापूर्वक और जिम्मेदारी से कार्य करने के लिए मजबूर कर सके।

जरूरत पड़ने पर विपक्ष दल भी शासन संभाल लेते है। इसीलिए विपक्ष को वैकल्पिक सरकार भी कहा जाता है, लेकिन भारत में संगठित विपक्ष की कमी रही है। जनवरी 1977 में, कांग्रेस संगठन, जनसंघ, भारती लोक दल और समाजवादी पार्टियों ने जनता पार्टी का गठन किया और कांग्रेस के विकल्प के रूप में लोकसभा चुनाव लड़ा। कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी ने भी जनता पार्टी के बैनर तले चुनाव लड़ने के लिए जनता पार्टी से हाथ मिलाया। इस चुनाव में जनता पार्टी को स्पष्ट बहुमत मिला और कांग्रेस को केवल 153 सीटें मिलीं और इस प्रकार कांग्रेस की हार ने एक विपक्षी पार्टी को जन्म दिया।जनता सरकार ने विपक्ष के नेता को कैबिनेट मंत्री के रूप में मान्यता दी। चुनाव के बाद, लोकसभा में विपक्ष के नेता यशवंत राव चव्हाण थे। जनवरी 1979 में कांग्रेस के विभाजन के बाद, वह एक कांग्रेस नेता एम.स्टीफन को लोकसभा में विपक्ष का नेता घोषित किया गया और कांग्रेस नेता कमलापति त्रिपाठी को राज्यसभा में विपक्ष का नेता घोषित किया गया।लेकिन जनवरी, 1980 और दिसंबर, 1984 के लोकसभा चुनावों में किसी भी पार्टी को एक सफल विपक्षी पार्टी का दर्जा नहीं मिला। लेकिन 1989 के लोकसभा चुनावों में, कांग्रेस हार गई और कांग्रेस एक संगठित विपक्षी पार्टी के रूप में उभरी। कांग्रेस नेता राजीव गांधी को विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता दी गई थी। मई-जून 1991 के लोकसभा चुनावों में, भारतीय जनता पार्टी कांग्रेस के बाद दूसरी सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी, जिसने 119 सीटें जीतीं, उसके नेता कृष्ण आडवाणी को विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता दी गई।अप्रैल-मई 1996 के लोकसभा चुनावों में, कांग्रेस ने 140 सीटें जीतीं और जनता पार्टी के बाद दूसरी सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी। इसके अलावा पी.बी.नरसिम्हा राव को विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता दी गई।

हालाँकि, 1 जून, 1996 को संयुक्त मोर्चा सरकार के गठन के साथ, भारतीय जनता पार्टी को विपक्ष के नेता के रूप में और अटल बिहारी वाजपेयी को विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता दी गई थी।

मार्च 1998 में, कांग्रेस नेता शरद पवार को 12 वीं लोकसभा में और मई 2004 में, भाजपा नेता लालकृष्ण आडवाणी को विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता दी गई थी। दिसंबर 2009 में, लोकसभा में विपक्ष के नेता के रूप में लालकृष्ण आडवाणी की जगह की सुषमा स्वराज को नियुक्त किया गया। 2014 में 16 वीं लोकसभा में, किसी भी पार्टी को मान्यता प्राप्त विपक्षी पार्टी का दर्जा नहीं दिया गया था।[3]

4. चुनाव आयोग राजनीतिक दलों का पंजीकरण (Registration of Political Parties with the Election Commission)-

दिसंबर 1988 में, संसद ने चुनाव प्रणाली में सुधार के लिए जन प्रतिनिधित्व कानून, 1950 और 1951 में संशोधन किया। संशोधन के अनुसार, एक राजनीतिक पार्टी बनने के लिए, चुनाव आयोग के साथ पंजीकृत होना चाहिए।कोई भी गुट या संगठन और संघ तब तक राजनीतिक दल नहीं बन सकता, जब तक कि वह चुनाव आयोग के साथ पंजीकृत न हो। पंजीकरण के लिए, प्रत्येक राजनीतिक दल को चुनाव आयोग को एक याचिका प्रस्तुत करनी होती है।ऐसी याचिकाओं पर राजनीतिक पार्टी के अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किए जाते हैं और याचिकाओं में पार्टी का नाम, पदाधिकारियों के नाम, संसद और राज्य विधानसभाओं में सदस्यों की संख्या आदि को शामिल करना होता है।ऐसे दलों का पंजीकरण हो सकता है जिन्होंने अपने संविधान में स्पष्ट रूप से कहा है कि वे देश के संविधान, समाजवाद, धर्म-निरपेक्षता और लोकतंत्र में विश्वास करते हैं। साथ ही, उन्हें देश की प्रभुसत्ता और अखंडता की रक्षा के लिए एक संकल्प की घोषणा करनी जरुरी है।कांग्रेस, मार्क्सवादी, कम्युनिस्ट पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, लोक-दल, भारतीय जनता पार्टी आदि जैसे राष्ट्रीय दलों ने कानून के अनुसार अपने संविधान में संशोधन किया है।

5. चुनाव आयोग द्वारा राजनीतिक दलों की मान्यता (Recognition of Political Parties by Election)-

चुनाव आयोग राजनीतिक दलों को मान्यता देता है और चुनाव चिन्ह प्रदान करता है। चुनाव आयोग के नियमों के तहत, किसी राजनीतिक दल को राज्य स्तर की पार्टी का दर्जा तब दिया जाता है। जब किसी पार्टी को लोकसभा या विधानसभा चुनावों में कुल वैध मतों का कम से कम छह प्रतिशत प्राप्त होता है और विधान सभा में कम से कम दो प्रतिशत। राज्य विधान सभा की कुल सीटों में से सीटों को कम से कम 3 प्रतिशत या 3 को सीटों प्राप्त हो।राष्ट्रीय स्तर का दर्जा हासिल करने के लिए, एक पार्टी को लोकसभा या विधानसभा सीटों में से कम से कम 4 प्रतिशत सीटें जीतनी जरुरी है।कम से कम 3 राज्यों की लोकसभा में प्रतिनिधित्व को कुल सीटों का 2% प्राप्त करना आवश्यक है। वर्तमान में, चुनाव आयोग ने 7 दलों को राष्ट्रीय दलों और 58 दलों को राज्य स्तरीय दलों के रूप में मान्यता दी है।

6. सांप्रदायिक दलों का अस्तित्व (Existence of Communal Parties)-

भारतीय पार्टी प्रणाली की एक विशेषता सांप्रदायिक दलों की उपस्थिति है। यद्यपि एक धर्म-निरपेक्ष राज्य में सांप्रदायिक दलों का भविष्य उज्ज्वल नहीं है, लेकिन उनके प्रचार और गतिविधियों के कारण देश का राजनीतिक वातावरण प्रदूषित हो गया है।

7. क्षेत्रीय दलों का होना (Existence of Regional Parties)-

सांप्रदायिक दलों के साथ, भारतीय पार्टी प्रणाली की एक प्रमुख विशेषता प्रांतीय दलों की उपस्थिति है। वर्तमान में, चुनाव आयोग ने 58 राजनीतिक दलों को क्षेत्रीय दलों के रूप में मान्यता दी है। ये दल राष्ट्रीय हित पर नहीं बल्कि अपनी पार्टी के क्षेत्रीय हित पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

डी .एम. के. के नेताओं ने अपने स्वयं के स्वार्थों के लिए देश के दक्षिणी और उत्तरी हिस्सों में मतभेद उत्पन्न करने की कोशिश की, जो देश के हित में नहीं था। क्षेत्रीय दल केंद्र और राज्यों के बीच तनाव के लिए काफी हद तक जिम्मेदार हैं क्योंकि क्षेत्रीय दल उन राज्यों से अधिक प्रभुसत्ता की मांग करते हैं जो केंद्र को स्वीकार नहीं हैं।

8. राजनीतिक दलों सिद्धांतो में की कमी

राजनीतिक दल आम तौर पर एक निश्चित राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक विचारधारा और सिद्धांतों पर आधारित होते हैं। लेकिन भारत में एक या दो को छोड़कर सभी दलों के पास न तो कोई निश्चित विचारधारा है और न ही कोई ठोस सिद्धांत। इसके अलावा, राजनीतिक दल सत्ता में आने पर भी अपनी विचारधारा का पालन नहीं करते हैं। राजनीतिक दल अपनी नीतियों और सिद्धांतों को जब चाहे अपने हितों के लिए बदल सकते हैं। राजनीतिक लाभ के लिए राजनीतिक दल अपनी विचारधारा का त्याग करने में संकोच नहीं करते।[4]

9. जनता से कम संपर्क (Less Contact with the Masses)-

भारतीय पार्टी की एक और विशेषता यह है कि यह जनता के साथ ज्यादा संपर्क में नहीं रहती हैं। भारत में कई पार्टियां चुनावों के दौरान बारिश मेंढक की तरह आती हैं और आमतौर पर चुनावों के साथ गायब हो जाती हैं।जैसे-जैसे पार्टियां स्थायी होती हैं, वे चुनाव के समय खुद को व्यवस्थित करते हैं और लोगों से संपर्क बनाने की कोशिश करते हैं। यहां तक कि कांग्रेस इसे चुनाव के बाद लोगों से संपर्क बनाना अपमान समझती है।चुनाव के द्रिष्टीकोण के अनुसार, सभी राजनीतिक दलों के नेता लोगों के साथ संपर्क बनाए रखने की महानता पर जोर देते हैं। लेकिन जब चुनाव खत्म हो जाते हैं, तो वे उस महानता को भूल जाते हैं। ग्रामीणों को उनका नाम तक पता नहीं होता है।डॉ पी.आर.राव के विचार में, "समाजवादी पार्टी के अलावा कोई भी पार्टी यह दावा नहीं कर सकती है कि उसके सदस्यों का भारतीय लोगों के साथ सीधा संबंध है।" ऐसे हालात में, भारतीय पार्टी प्रणाली के लिए सफलतापूर्वक और प्रभावी रूप से कार्य करना असंभव है।

10. राजनीतिक दलों के भीतर लोकतंत्र का अभाव (Lack of Democracy Within the Political Parties)–

भारतीय राजनीतिक दलों की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि राजनीतिक दलों की आंतरिक संरचना पूरी तरह से लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। सिद्धांतक रूप में, राजनीतिक दलों की आंतरिक संरचना लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित है, लेकिन बिहार में राजनीतिक दलों में लोकतंत्र नहीं पाया जाता है।राजनीतिक दल वर्षों से अपने स्वयं के संगठनात्मक चुनाव नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए, कांग्रेस की स्थापना 1978 में हुई थी लेकिन 1992 में उसके संगठनात्मक चुनाव हुए थे। जनता पार्टी 1977 में बनी थी लेकिन संगठनात्मक चुनाव नहीं हुए थे। वास्तव में, दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र की जीवनधारा, राजनीतिक पार्टी अपने संगठनात्मक विकल्पों को भूल गई है और पार्टी पूरी तरह से नामांकित और अंतरिम नेताओं द्वारा चलाई जा रही है।

इससे प्रायः सभी दलों में पार्टी की तानाशाही की प्रवृत्ति उजागर हुई है। जब तक राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र स्थापित नहीं होगा, वे किसी राष्ट्र की राजनीति में लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना के व्यापक लक्ष्य में भाग नहीं ले पाएंगे।[5]

11. असंतुष्ट दल (Dissidents)-

भारतीय राजनीतिक दल प्रणाली की एक और विशेषता दलों की खोज है। आमतौर पर, हर राज्य में कांग्रेस या जनता पार्टी के दो गुट होते हैं – सत्ताधारी और असंतुष्ट दल । 1978 और 1979 में, जनता पार्टी ने भी केंद्र में असंतुष्ट दलों का नेतृत्व किया, जिसका नेतृत्व चौधरी चरण सिंह और राज नारायण ने किया। हर राज्य में जनता पार्टी के असंतुष्ट दल हैं। असंतुष्ट दलों ने खुले तौर पर सत्ताधारी दल के विरुद्ध भ्रष्टाचार का आरोप लगते है और सत्ता के दुरुपयोग की आलोचना की करते है। यहां तक कि चुनावों में, क्रोधित दल और सत्ताधारी दल एक दूसरे के खिलाफ काम करते हैं।1979 में हरियाणा में चौधरी देवीलाल को लंबे समय तक सत्ता के लिए संघर्ष करना पड़ा। हिमाचल प्रदेश में, भारतीय जनता पार्टी के मुख्यमंत्री शांता कुमार को पहले तीन वर्षों में दो बार अपनी पार्टी का विश्वास जीतना पड़ा। आज सभी राज्यों में जहाँ कांग्रेस सत्ता में है, वहाँ दो गुट हैं – सत्ताधारी और विपक्ष दल ।असंतुष्ट दल का कारण यह था कि राजीव गांधी ने 1985 से 1989 तक महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार आदि के कांग्रेस शासित राज्यों में कई वैकल्पिक मुख्यमंत्री बनाए । कांग्रेस में, 1992 से मई 1995 तक, असंतुष्ट दल का नेतृत्व अर्जन सिंह ने किया था। गुटबंदी के कारण मई 1995 में कांग्रेस अलग हो गई।

12. सत्ताधारी पार्टी और सरकार(Ruling Party and Govt)-

भारतीय दल प्रणाली के आलोचकों का कहना है कि सत्ताधारी पार्टी के अध्यक्ष का पार्टी की सरकार पर कोई नियंत्रण नहीं है। अरोग दाल प्रणाली के भीतर, शक्ति धारी दल के अध्यक्ष का भारत में नहीं, बल्कि सरकार पर काफी नियंत्रण है। पंडित नेहरू के महान प्रभाव के कारण, कांग्रेस अध्यक्ष की महानता बहुत कम थी। उसी कारण से जे.बी. कृपलानी ने 1949-50 में कांग्रेस के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया। उनकी उत्तराधिकारी डॉ.पट्टाभि सीता राम्या ने भी कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में उनकी दुर्लभता पर अफ़सोस किया। पुरुषोत्तम दास टंडन ने भी नेहरू के साथ मतभेदों के कारण कांग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया था। 1976-77 में, अधिकांश लोग इंदिरा गांधी को कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में मानते थे और बहुत कम लोग थे जो कांग्रेस के अध्यक्ष डी.के बरूहा का नाम जानते थे। जनता पार्टी के अध्यक्ष चंद्र शेखर का भी मोरारजी देसाई की सरकार पर कोई नियंत्रण नहीं था। लेकिन जब कांग्रेस आई तो यह लागू नहीं हुआ, क्योंकि कांग्रेस अध्यक्ष इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री थीं। राजीव गांधी और नरसिम्हा राव ने भी कांग्रेस प्रधान मंत्री का पद बरकरार रखा।

13. स्थानांतरण (Defections)-

भारतीय दल प्रणाली की एक और बड़ी विशेषता यह है कि इसमें स्थानांतरण के कई उदाहरण हैं। पार्टी के परिवर्तन ने राज्यों के राजनीतिक और शासन में अस्थिरता ला दी है। जिसके कारण संसदीय लोकतंत्र खतरे में है।इस प्रकार, पहले आम चुनाव से लेकर चौथे आम चुनाव तक, हमें 'स्थानांतरण' के कई उदाहरण मिलते हैं, लेकिन चौथे आम चुनाव के बाद, कुछ राज्यों में दोषों की संख्या इतनी बढ़ गई कि ऐसा लगने लगा कि भारत में संसदीय शासन – सिस्टम नहीं चल सकेगा।एक अनुमान के अनुसार पहले चार चुनावों में केवल 542 पार्टियां बदलीं, जबकि 1967 के आम चुनाव के बाद एक साल के 438 पार्टियां बदली थी। 1971 से 1976 तक स्थानांतरण कांग्रेस के साथ रहे। लेकिन जब 1977 में जनता पार्टी सत्ता में आई तो दल बादल ने जनता पार्टी के साथ गठबंधन किया।कांग्रेस के सैकड़ों विधायक अपनी पार्टी छोड़कर जनता पार्टी में शामिल हो गए। जुलाई 1979 में, जनता पार्टी के कई सदस्यों के चले जाने के बाद प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को इस्तीफा देना पड़ा। केंद्र सरकार के इतिहास में ऐसा पहली बार हुआ था कि प्रधानमंत्री को अपनी पार्टी के सदस्यों के कारण इस्तीफा देना पड़ा।

जनवरी 1980 में लोकसभा चुनाव से पहले और बाद में, बड़ी संख्या में बचाव हुए और यह स्थानांतरण कांग्रेस के पक्ष में हुआ। जनवरी 1980 में, हरियाणा के मुख्यमंत्री भजन लाल ने 37 विधायकों के साथ जनता पार्टी छोड़ दी और कांग्रेस में शामिल हो गए। हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री शांता कुमार को स्थानांतरण के कारण फरवरी 1980 में मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा था।1981 में, कांग्रेस(अरस) के कई महत्वपूर्ण सदस्य कांग्रेस में शामिल हो गए। मई 1982 में हुए हरियाणा और हिमाचल प्रदेश के विधानसभा चुनावों में किसी भी पार्टी को बहुमत नहीं मिला, जिसके कारण पार्टी में बदलाव हुआ और स्वतंत्र सदस्यों ने अपनी कीमतें बढ़ाईं। जनवरी, 1985 में पार्टी बदल जाएगी, और स्थानांतरण सदस्यता समाप्त कर दी जाएगी। दिसंबर 1993 में, कांग्रेस ने लोकसभा में बहुमत हासिल किया। अप्रैल-मई, 1996 के आम चुनावों से पहले और बाद में, लगभग हर राजनीतिक दल में पार्टी में उच्च स्तर पर बड़ा बदलाव आया।[6]

14. कार्यक्रमों की तुलना में नेतृत्व की प्राथमिकता (More Emphasis on leadership than Programs)-

भारत में कई राजनीतिक दलों में, नेतृत्व कार्यक्रम को प्रमुखता दी जाती है और ऐसा करना जारी है। पहले आम चुनाव में, कांग्रेस ने पंडित नेहरू के नाम पर बड़ी सफलता हासिल की। कांग्रेस ने कभी अपने कार्यक्रम का प्रचार नहीं किया।1967 के चुनावों में कांग्रेस को अधिक सफलता नहीं मिली क्योंकि इंदिरा गांधी की प्रतिभा नेहरू के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए बहुत कम थी और कांग्रेस के कार्यक्रम को लोगों को नहीं जान पाते थे , लेकिन 1971 के चुनावों में, लोगों ने इंदिरा गांधी को वोट दिया। पंजाब में अकाली दल में संत फतेह सिंह प्रमुख थे और 1967 के चुनावों में, अकाली दल को संत फतेह सिंह के नाम पर अधिक वोट मिले, न कि पार्टी के कार्यक्रमो के आधार पर।जनवरी 1978 में, कांग्रेस पार्टी का विभाजन हुआ और श्रीमती इंदिरा गांधी की अध्यक्षता में इंदिरा कांग्रेस का गठन हुआ। 1980 के लोकसभा चुनावों में, राजनीतिक दलों ने कार्यक्रम में व्यक्ति या नेता को महानता दी। इसलिए, तीन प्रमुख दलों ने अपने संबंधित प्रधानमंत्रियों को जनता के सामने पेश किया। इस संबंध में इंदिरा गांधी का विशेष स्थान था।

1980 में कांग्रेस की जीत वास्तव में श्रीमती इंदिरा गांधी की जीत थी। जनता ने इंदिरा गांधी को वोट दिया न कि कांग्रेस के कार्यक्रमो को। दिसंबर 1984 के चुनावों में, लोगों ने राजीव गांधी को वोट दिया, न कि कांग्रेस के कार्यक्रम के लिए। 1996, 1998 और 1999 के चुनावों में, पार्टी ने कार्यक्रमों के बजाए नेताओं पर ध्यान केंद्रित किया। लेकिन एक उचित दल प्रणाली के लिए, पार्टी कार्यक्रम पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है न कि नेता पर।

15. अनुशासन की कमी(Lack of Discipline)-

ज्यादातर पार्टियों को अनुशासन की परवाह नहीं है। यदि किसी सदस्य को चुनाव लड़ने के लिए पार्टी का टिकट नहीं मिलता है, तो वह पार्टी छोड़ देता है और उसके बाद वह या तो अपनी पार्टी बनाता है या किसी अन्य पार्टी से चुनाव लड़ता है या निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ता है। मई 1981 में हरियाणा और हिमाचल प्रदेश के विधानसभा चुनावों में, कई कांग्रेस सदस्यों ने अपनी पार्टी के उम्मीदवार के खिलाफ निर्दलीय के रूप में चुनाव लड़ा।कांग्रेस ने विद्रोही कांग्रेसियों को पार्टी से निष्कासित कर दिया, लेकिन चुनाव के बाद, कांग्रेस ने पार्टी में विजयी निर्दलीय उम्मीदवार को शामिल करने की पूरी कोशिश की, ताकि सरकार बनाई जा सके। 1991 के हरियाणा विधानसभा चुनाव में फिर से वही बात हुई। अनुशासन की कमी स्थानांतरण की बुराई का कारण है।[5]

16. राजनीतिक दलों के गैर-सिद्धांतक गठबंधन(Non Principle Alliance of Political Parties)-

भारतीय दल प्रणाली की एक महत्वपूर्ण विशेषता और दोष यह है कि राजनीतिक दल अपने हितों की सेवा के लिए गैर-सिद्धांतक गठबंधन बनाने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। जनवरी 1980 के लोकसभा चुनावों में, सभी दलों ने गैर-सिद्धांतक गठबंधन बनाए।उदाहरण के लिए, अन्नाद्रमुक केंद्रीय स्तर पर लोकदल सरकार में शामिल थी और जनता पार्टी के चौधरी चरण सिंह के साथ सहयोग करने के लिए प्रतिबद्ध थी, लेकिन दूसरी ओर पार्टी ने तमिलनाडु में जनता पार्टी के साथ चुनावी गठबंधन किया। अजीब बात यह है कि यह गठबंधन केंद्र सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए बनाया गया था।अकाली दल के अध्यक्ष तलवंडी ने लोकदल के साथ गठबंधन किया, जबकि कई विधायक और मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल जनता पार्टी के साथ गठबंधन की बात करते रहे। जैसा कि कांग्रेस ने अन्य दलों के समझौतों को गैर-सिद्धांतक बताया, खुद तमिलनाडु में डी.एम.के. के साथ चुनावी गठबंधन किया। आपातकाल में, श्रीमती इंदिरा गांधी ने दारुमक(डी.एम.के.) की करुणानिधि सरकार को बर्खास्त कर दिया। मार्च 1987 में, कांग्रेस ने नेशनल कांफ्रेंस के साथ मिलकर चुनाव लड़ा और गठबंधन सरकार बनाई।केरल में कांग्रेस ने मुस्लिम लीग के साथ मिलकर चुनाव लड़ा। 1989 के लोकसभा चुनाव के अवसर पर, जनता दल ने मार्क्सवादी पार्टी और भारतीय जनता पार्टी के साथ गठबंधन किया। 1991, 1996, 1998, 1999, 2004, 2009 और 2014 के आम चुनावों में, लगभग सभी दलों ने गैर-सिद्धांतक गठबंधन बनाए। तमिलनाडु में अन्ना दारुमक के साथ कांग्रेस और केरल में मुस्लिम लीग, महाराष्ट्र में शिवसेना के साथ भारतीय जनता पार्टी और बिहार में

समता पार्टी, उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी के साथ जनता दल, आंध्र प्रदेश में तेलुगु देशम, असम में असम गण परिषद के साथ संबद्ध है।

17. राजनीतिक दलों का सीमित संगठन(Limited Organisation of Political Parties)-

अप्रैल-मई 2014 में हुए 16 वें लोकसभा चुनाव में, चुनाव आयोग ने छह राजनीतिक दलों को मान्यता दी, लेकिन कांग्रेस को छोड़कर किसी भी दल के पास राष्ट्रीय प्रारूप नहीं है। कम्युनिस्ट पार्टी पश्चिम बंगाल, केरल और त्रिपुरा तक ही सीमित है। भाजपा का आधार राजस्थान, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र तक सीमित है। इन दलों के दोषपूर्ण संगठन के कारण, आम जनता को राजनीतिक दलों की नीतियों और कर्जक्रमो के बारे में कम जानकारी है।[4]

विचार-विमर्श

भारतीय दल प्रणाली की विशेषताओं और रूप से यह स्पष्ट है कि इसमें उन महान गुणों का अभाव है जो पार्टी सरकार की सफलता के लिए आवश्यक हैं। बहुदलीय प्रणाली, एक संगठित विपक्षी पार्टी की अनुपस्थिति, एक ही दल की अध्यक्षता, सांप्रदायिक और क्षेत्रीय दलों की उपस्थिति और दोषपूर्ण भारतीय दल प्रणाली कुछ ऐसी विशेषताएं हैं जो संसदीय प्रणाली की सफलता के लिए घातक साबित हो रही हैं। इसलिए समान विचारधारा वाले दलों को एक साथ आने और पुनर्गठित और शक्तिशाली विपक्ष बनाने की जरूरत है। महान गिरोहों की जरूरत नहीं है क्योंकि वे देश की समस्याओं को हल करने के बजाए पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं। वर्तमान युग लोकतन्त्र का युग है। लोकतन्त्र के लिए दल अनिवार्य है। दोनों अभिन्न है। राजनीतिक दलों के बिना लोकतन्त्रात्मक सरकार नही चल सकती और लोकतन्त्र के बिना राजनीतिक दलों का विकास नहीं हो सकता। भारत विश्व में सबसे बड़ा लोकतन्त्रात्मक देश है अतः भारत में दलीय व्यवस्था भी है परन्तु यहाँ पर राजनीतिक दलों का विकास उस प्रकार नहीं हुआ जैसा कि पश्चिम के लोकतान्त्रिक देशों में हुआ।

भारत में दलीय व्यवस्था की अपनी विशेषताएँ हैं जिनमें मुख्य है:-

1. बहुउद्देशय पद्धति,
2. एक दल की प्रधानता का युग,
3. एक दल की प्रधानता के युग का अन्त,
4. प्रभावशाली विरोधी दल का उदय,
5. साम्प्रदायिक दलों का होना,
6. प्रादेशिक दलों का होना,
7. राजनीतिक दलों के दृढ़ सिद्धान्त नहीं,
8. (8)राजनीतिक दलों में लोकतन्त्र का अभाव,
9. दल-बदल,
10. विक्षुब्ध गुट,
11. कार्यक्रम की अपेक्षा नेतृत्व को प्रमुखता,
12. अनुशासन का अभाव,
13. राजनीतिक दलों द्वारा सिद्धान्तहीन समझौते।

अतः इस प्रकार भारतीय दलीय प्रणाली की विशेषता एवं स्वरूप से स्पष्ट है कि इसमें बहुत से महत्वपूर्ण गुणों की कमी है जो संसदीय शासन प्रणाली की सफलता के लिए घातक सिद्ध हो रही है। प्रायः सभी राजनीतिक दलों ने सत्ता प्राप्त करते ही या अवसर मिलते ही स्वार्थ लिप्सा को सर्वोपरि महत्व दिया है।[3]

परिणाम

आज की परिस्थितियों में दलीय व्यवस्था की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख निम्न रूपों में किया जा सकता है-

(1) बहुदलीय व्यवस्था- भारत में ब्रिटेन या अमेरिका की तरह द्विदल पद्धति नहीं, वरन् बहुदलीय पद्धति है। चौदहवीं लोकसभा में 40 से अधिक और राज्यों की विधानसभाओं में कुल मिलाकर 50 से अधिक राजनीतिक दल है। इनमें से कुछ को छोड़कर अन्य के पास कोई नीति-अथवा कार्यक्रम नहीं है। कुल राजनीतिक दलों का संगठन और स्वरूप केवल कहने के लिए है और इनका प्रभाव क्षेत्र बहुत सीमित है। भारत की बहुदलीय व्यवस्था में लगभग सदैव ही किसी एक राजनीतिक दल को प्रधानता की स्थिति प्राप्त रहीं है, लेकिन आज स्थिति यह है कि किसी एक राजनीतिक दल या दलीय गठबन्धन को प्रधानता की स्थिति प्राप्त नहीं है। लोकसभा में प्राप्त स्थानों की दृष्टि से कांग्रेस सबसे बड़ा दल लेकिन यह दल भी प्रधानता की स्थिति से बहुत दूर है।बहुदलीय व्यवस्था का वर्तमान में जो रूप है, उसके कारण लोकसभा चुनाव 'खण्डित जनादेश' (Fractured Mandate) ही प्राप्त हो जाता हैं 'खण्डित जनादेश' का आशय है, लोकसभा में किसी एक राजनीकि दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो। ऐसी स्थिति में एकदलीय सरकार का नहीं, वरन् मिली-जुली सरकार का ही गठन हो पाता है।

(2) राजनीतिक दलों में बिखराव, विभाजन और दलीय व्यवस्था में अस्थायित्व – भारतीय राजनीति में न केवल अनेक दल है, वरन् इन राजनीतिक दलों में बिखराव, विभाजन और अस्थायित्व की स्थिति भी बनी हुई हैं। सर्वप्रमुख राजनीतिक दल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का 1969 ई. में विभाजन हुआ और इस विभाजन से जन्म लेने वाल राजनीतिक दल सत्ता कांग्रेस का 1978 में 1978 के विभाजन से जिस 'कांग्रेस (आई)' का जन्म हुआ था, उसका विभाजन 1995 तथा 1999 ई. में हुआ। 1977 में सत्तारूढ़ जनता पार्टी कालान्तर में चार भागों में विभक्त हो गई। 'विभाजन और विलय' की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप 1988 में जनता दल की स्थापना हुई और कुछ समय के लिए इस दल ने एक बड़ी राजनीतिक शक्ति का रूप प्राप्त कर लिया, लेकिन नबम्बर '90 में जनता दल में विभाजन की स्थिति बनी तथा इसके बाद से जनता दल में बिखराव और विभाजन की प्रक्रिया निरन्तर जारी है। न केवल तथाकथित राष्ट्रीय दल वरन् डी. एम. के. अकाली दल और केरल कांग्रेस जैसे क्षेत्रीय दल भी अनेक भागों में विभक्त है। स्थिति यह है कि आज एक राजनीतिक दल जन्म लेता है कल उसमें टूटने, समाप्ति या अन्य किसी दल में उसके विलय की स्थिति पैदा हो जाती है। इस प्रकार राजनीतिक दलों में कोई स्थायित्व नहीं है और राजनीतिक चित्र में अस्पष्टता बनी हुई है। भारत में दलीय व्यवस्था की निश्चित रूप से यह एक बड़ी विकृति है।

(3) अधिकांश राजनीतिक दलों में आन्तरिक लोकतन्त्र और अनुशासन का अभाव – राजनीतिक दलों के प्रसंग में एक खेदजनक तथ्य यह है कि अधिकांश राजनीतिक दलों में

'आन्तरिक लोकतन्त्र' का अभाव है और वे अनुशासनहीनता से पीड़ित हैं। अधिकांश राजनीतिक दलों में लम्बे समय से संसदात्मक चुनाव नहीं हुए थे सब कुछ 'तदर्थ आधार' (Adhoc basis) की पद्धति के आधार पर चल रहा था, चुनाव आयोग के निर्देश के कारण पहली बार मई-जून 1997 में, दूसरी 2000 ई. में, तीसरी बार 2003 – में राजनीतिक दलों के संगठनात्मक चुनाव सम्पन्न हुए तथा चौथी बार मार्च-मई 2005 ई. में संगठनात्मक चुनावोंकी प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। लेकिन इन चुनावों में निश्चित रूप से अनेक कमियां रहीं। सामान्य स्थिति यह है कि दलों का निर्माण किन्हीं प्रक्रियाओं, मर्यादाओं, सिद्धान्तों या कानूनों के आधार पर नहीं होता है और दलों की आय व्यय का कोई लेखा-जोखा सदस्यों के सामने प्रस्तुत नहीं किया जाता।[2]

(4) संख्या बल की दृष्टि से शक्तिशाली, लेकिन विभाजित विपक्ष- 1967-70 तथा 1977-79 के काल को छोड़कर भारतीय राजनीति में सामान्यतया कमजोर और विभाजित विपक्ष की स्थिति ही रही है, लेकिन नौवीं, दसवीं, ग्याहरवीं, बारहवीं, तेरहवी और चौदहवीं लोकसभा के चुनावों ने (1989 से 2006 के काल में विपक्ष को संख्या बल की दृष्टि से शक्तिशाली बनाया है।

बारहवीं और तेरहवी लोकसभा चुनाव के बाद भाजपा के नेतृत्व में मिली-जुली सरकार का गठन हुआ और मुख्य विपक्षी दल की स्थिति कांग्रेस ने प्राप्त की। बारहवीं तथा तेरहवीं लोकसभा में विपक्ष संख्या बल की दृष्टि से शक्तिशाली होते हुए भी एक कमजोरी से पीड़ित था और वह कमजोरी थी, विपक्ष का विभाजित होना विपक्ष की इसी विभाजित स्थिति के कारण अप्रैल '99 में विपक्ष में बाजपेयी सरकार तो गिरा दी, लेकिन वह देश को वैकल्पिक सरकार नहीं दे पाया। 14वीं लोकसभा में मुख्य विपक्षी दल की स्थिति भाजपा की प्राप्त है और विपक्षी गठबन्धन के रूप में 'राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन' है तथा इस प्रकार यह न केवल शक्तिशाली वरन् संगठित भी है। राज्य स्तर पर भी अधिकांश राज्यों में विपक्ष पर्याप्त शक्तिशाली है।

(5) क्षेत्रीय दलों की शक्ति में वृद्धि- नवीन संविधान लागू किए जाने के कुछ वर्ष बाद से ही भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों का अस्तित्व रहा है। प्रमुख क्षेत्रीय दल रहे हैं – द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (डी.एम.के.) अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (अन्ना डी. एम. के.) अकाली दल, मुस्लिम लीग, मुस्लिम मजलिस, केरल कांग्रेस, शिवसेना, तेलुगूदेशम और नेशनल कान्फ्रेंस, आदि। इसके अतिरिक्त नगालैण्ड, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश तथा सिक्किम में तो नगालैण्ड लोकतान्त्रिक दल, मणिपुर पीपुल्स पार्टी और सिक्किम डेमाक्रेटिक फ्रण्ट, आदि क्षेत्रीय दल ही प्रभावशाली है। अब तक स्थिति यह थी कि क्षेत्रीय दल लोकसभा चुनाव में अपनी शक्ति और प्रभाव का सीमित परिचय ही दे पाते थे, लेकिन ग्याहरवीं, बारहवीं, तेरहवीं और चौदहवीं लोकसभा के चुनावों में क्षेत्रीय दलों की शक्ति में भारी वृद्धि हुई है। ग्यारहवीं लोकसभा में क्षेत्रीय दलों ने 125, बारहवीं लोकसभा में 170, तेरहवीं लोकसभा में कुन मिलाकर 190 से अधिक और चौदहवी में लोकसभा में क्षेत्रीय दलों और अन्य पंजीकृत दलों ने 171 स्थान प्राप्त किए हैं। 1996 से लेकर अब तक केन्द्र में जो भी सरकारें बनीं, उन सभी सरकारों के गठन तथा कार्यकरण में क्षेत्रीय दलों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस प्रकार क्षेत्रीय दलों या गुटों ने भारतीय राज व्यवस्था में निर्णयकारी स्थिति प्राप्त कर ली हैं।

(6) दलों में आन्तरिक गुटबन्दी भारत की दल प्रणाली की एक प्रमुख (ज वस्तुतः बड़ी बुराई है) विभिन्न दलों में आन्तरिक गुटबन्दी है। लगभग सभी राजनीतिक दलों में छोटे-छोटे गुट पाए जाते है : एक वह जो सत्ता या संगठन के पदों पर आसीन है और दूसर असन्तुष्ट गुट। इन गुटों में पारस्परिक मतभेद इस सीमा तक पाया जाता है कि कभी-कभी चुनावों में एक गुट के समर्थन प्राप्त उम्मीदवारों को दूसरे गुट के सदस्य पराजित करने का भरसक प्रयत्न करते है। कांग्रेस और भाजपा सहित सभी राजनीतिक दलों में यही स्थिति है। विशि विचारधारा पर आधारित मार्क्सवादी दल और अन्य वामपंथी दल भी गुटबन्दी से मुक्त नहीं है तथा सभी क्षेत्रीय दल भी आन्तरिक गुटबन्दी से गम्भीर रूप से ग्रस्त हैं। पश्चिमी देशों मेंराजनीतिक दलों की तुलना में भारत के राजनीतिक दलों में गुटबन्दी बहुत तीव्र है। शासक दल और अन्य दलों में गुटबन्दी की यह स्थिति भारतीय राजनीति का अभिशाप बनी हुई है।

(7) राजनीतिक दलों की नीतियों और कार्यक्रम में स्पष्ट भेद का अभाव– भारत के राजनीतिक दलों की नीतियों और कार्यक्रमों में स्पष्ट भेद का अभाव है और इसी कारण वे जनता के सम्मुख स्पष्ट विकल्प प्रस्तुत करने में असफल रहे है। वस्तुतः राजनीतिक दलों की नीतियां और कार्यक्रम अत्यधिक अस्पष्ट और अनिश्चित है। कुछ राजनीतिक दलों के पास अपना कोई निश्चित कार्यक्रम न होने के कारण उनके द्वारा अनावश्यक रूप में आन्दोलनकारी राजनीति को अपनाया जाता है और विघटनकारी तत्वों को प्रोत्साहित किया जाता है। आज स्थिति यह है कि आर्थिक और राजनीतिक कार्यक्रम नहीं वरन् 'मन्दिर-मस्जिद विवाद' और जातिवादी गठजोड़ सामान्य जल की भाषा में कमण्डल और मण्डल' राजनीतिक दलों की पहचान बन गए है। वस्तुस्थिति यह है कि सत्ता ही सभी राजनीतिक दलों का असली धर्म है।

(8) राजनीतिक दल-बदल- भारत में दल-बदल की स्थिति सदैव से विद्यमान रहीं है, लेकिन 1967 से 70 और पुनः 1977-79 के वर्षो में यह प्रवृत्ति बहुत अधिक भीषण रूप में देखी गई। दलबदल राजनीतिक अस्थिरता का कारण और परिणाम, दोनों ही रहा है और इसने राजनीतिक वातावरण को दूषित करने का की कार्य किया है। अतः लम्बे समय से दल बदल पर रोक लगाने की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी और जनवरी 1985 में भारतीय संविधान में 52वां संवैधानिक संशोधन कर दल-बदल पर कानूनी रोक लगा दी गई, लेकिन इस कानून में प्रावधान है कि एक राजनीतिक दल के विभाजन और एक राजनीतिक दल के दूसरे राजनीतिक दल में विलय को दल-बदल नहीं समझा जाएगा ऐसी स्थिति में विभाजन और विलय के नाम पर दल-बदल की स्थिति बनी रहीं। 91 वें संवैधानिक संशोधन (2003) के आधार पर दल-बदल पर पूर्णतया रोक लगाने की चेष्टा की गई है, लेकिन अब भी एक राजनीतिक दल के दूसरे राजनीतिक दल में विलय के नाम पर दल बदल किया जा सकता है और किया जा रहा हैं। विधानसभा सदस्यों के दल-बदल के बाद इस बात को लेकर कानूनी और राजनीतिक विवाद जन्म लेते है कि यह स्थिति दल-बदल है या विधि सम्मत विभाजन और विलय। वस्तुतः दल-बदल पर प्रभावी रोक तभी सम्भव है जबकि राजनीतिक दल विशिष्ट विचारधारा पर आधारित हों, संवैधानिक प्रावधानों के आधार पर उनकी संख्या को सीमित नियन्त्रित

किया जाए ओर सभी राजनीतिक दल आधार संहिता को अपनायें।[1]

निष्कर्ष

भारतीय दल प्रणाली के दोष

भारतीय दल प्रणाली में निम्नलिखित प्रमुख दोष विद्यमान हैं-

1. नीतियों और कार्यक्रमों में अस्पष्टता

भारत के राजनीतिक दलों में स्पष्ट नीति व कार्यक्रम का अभाव हैं।

2. दलों का गठन विचारधारा के आधार पर नहीं

भारत में राजनीतिक दलों का गठन राजनीतिक-आर्थिक विचारधाराओं के आधार पर नहीं, बल्कि अन्य प्रभावों से हुआ हैं।

3. योग्य व्यक्तियों की उदासीनता

राजनीतिक दलों के कारण देश में भयंकर झगड़े और उपद्रव होते हैं। अतः योग्य व्यक्तियों का राजनीतिक कार्यों में उत्साह नहीं होता हैं, प्रायः वे उदासीन रहते हैं।

4. बाहुलता एक अनिवार्य दुर्बलता

भारत एक 'बहुल' समाज वाला देश हैं। यहाँ भाषाई, जातिगत, धार्मिक और क्षेत्रीय विविधता बहुत अधिक है। साथ ही यहाँ एक परिपक्व राजनीतिक चरित्र का भी अभाव हैं। इसलिए भारत में राजनीतिक दलों की बहुलता एक अनिवार्य दुर्बलता बन गई हैं।

5. सुसंगठित विरोधी दल का अभाव

संसदीय प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिए सशक्त विरोधी दल का होना आवश्यक होता हैं लेकिन बहुदलीय व्यवस्था के कारण भारत में संभव नहीं हैं।

6. अनुशासन का अभाव

भारत के अधिकांश राजनीतिक दलों में संगठनात्मक ढाँचा बहुत ढीला हैं। दलों के नेताओं और कार्यकर्ताओं में अनुशासन का बहुत अभाव हैं। इसीलिए दलों में फूट पड़ती रहती हैं।

7. व्यक्ति पूजा पर आधारित

भारत दल पद्धित व्यक्ति पूजा पर आधारित हैं। राजनीतिक दलों का गठन व्यक्तियों के आधार पर होता हैं, चाहे वे सिने जगत के ही रहे हों।

भारतीय दलीय व्यवस्था की समस्याएँ भारतीय दलीय व्यवस्था की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं-

- दलों की संख्या में वृद्धि-भारत में बहुदलीय व्यवस्था है। बहुदलीय व्यवस्था में राजनीतिक अस्थिरता का दौर जारी है। राजनीतिक दलों की भरमार ने अस्थिर राजनीतिक स्थिति के साथ-साथ अन्य समस्याओं को भी जन्म दिया है।
- वैचारिक प्रतिबद्धता का अभाव-राजनीतिक दल आर्थिक और राजनीतिक विचारधारा पर आधारित होना चाहिए तथा दल एवं उसके सदस्यों में वैचारिक प्रतिबद्धता होनी चाहिए लेकिन भारतीय राजनीतिक दलों में वैचारिक प्रतिबद्धता का अभाव है। वैचारिक प्रतिबद्धता से रहित इन दलों का मुख्य उद्देश्य येन-केन प्रकारेण सत्ता प्राप्त करना होता है तथा सत्ता से जुड़े लाभ प्राप्त करने के लिए ये अपने सिद्धान्तों की तिलांजलि देने में तत्पर रहते हैं।
- दलीय व्यवस्था में अस्थायित्व-भारतीय राजनीतिक दल निरन्तर बिखराव और विभाजन के शिकार हैं। इस कारण इन दलों में तथा भारतीय दलीय व्यवस्था में स्थायित्व का अभाव है। कई बार तो राज्यों में सत्ता हेतु पूरे-के-पूरे राजनीतिक दल ने अपना चरित्र बदल दिया।
- दलों में आन्तरिक लोकतन्त्र का अभाव-भारत के अधिकांश राजनीतिक दलों में आन्तरिक लोकतन्त्र का अभाव है और वे घोर अनुशासनहीनता से पीड़ित हैं।
- राजनीतिक दलों में गुटीय राजनीति-लगभग सभी राजनीतिक दल तीव्र आन्तरिक गुटबन्दी की समस्या से पीड़ित हैं। लगभग सभी राजनीतिक दलों में अनेक छोटे-बड़े गुट विद्यमान हैं। इन दलों में गुटीय राजनीति इतनी तीव्र है कि चुनावों में एक गुट के समर्थन प्राप्त उम्मीदवार को उसी दल के दूसरे गुट के सदस्य पराजित करने की भरसक कोशिश करते हैं। [5]
- सत्ता के लिए संविधानेतर और विघटनकारी प्रवृत्तियों को अपनाना-वैचारिक प्रतिबद्धता के अभाव तथा गहरी सत्ता लिप्सा के कारण राजनीतिक दलों ने पिछले दशक की राजनीति में बहुत अधिक मात्रा में संविधानेतर और विघटनकारी प्रवृत्तियों को अपना लिया है।
- नेतृत्व का संकट-भारत में वर्तमान में राजनीतिक दलों के समक्ष नेतृत्व का संकट भी बना हुआ है। अधिकांश राजनीतिक दलों के पास ऐसा नेतृत्व नहीं है, जिसका अपना ऊँचा राजनीतिक कद हो। प्रायः बौना नेतृत्व बना हुआ है। नेतृत्व का यह बौना कद न तो दल को एकजुट रख पा रहा है और न ही वह अपने दल या देश की राजनीति को कोई दिशा दे पा रहा है।

राजनीतिक दलों को मान्यता निर्वाचन आयोग द्वारा प्रदान की जाती है। जो राजनीतिक दल राष्ट्रीय या राज्य स्तरीय दल के रूप में मान्यता प्राप्त करना चाहता है। वह इसके लिए आयोग के समक्ष आवेदन करता है। निर्वाचन आयोग ऐसे दल को चुनाव में उसके प्रदर्शन को देखते हुए कुछ शर्तों के आधार पर पिछले लोकसभा या राज्य विधान सभा के आम राष्ट्रीय अथवा राज्य-स्तर के दल के रूप में मान्यता प्रदान करता है। [6]

भारत के प्रमुख राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय राजनीतिक दल

राजनीतिक दल	गठन का वर्ष	संस्थापक/प्रथम अध्यक्ष
1. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस	1885 (मुंबई)	ए ओ ह्यूम (पहला अध्यक्ष व्यामेश चंद्र बनर्जी)
2. भारतीय जनता पार्टी (BJP)	1980 (नई दिल्ली)	अटल बिहारी वाजपेयी
3. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (CPI)	1920	एम. एन. राय
4. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (C.P.I.M.)	1964	ई.एम.एस. डांगे
5. द्रविड़ मुनेत्र कषगम (DMK)	1949	सी.एन. अन्ना दुराई
6. अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कषगम (ADMK)	1972	एम.जी. रामचंद्रन
7. बहुजन समाज पार्टी	14 अप्रैल 1984 (अंबेडकर के जन्मदिन पर)	कांशीराम
8. समाजवादी पार्टी	4 नवंबर 1992	मुलायम सिंह यादव
9. जनता पार्टी	1977	जय प्रकाश नारायण

10. तेलगू देशम 1982 एन.टी. रामाराव
11. राष्ट्रीय जनता दल 1997 शरद पवार, पी.ए. संगमा
12. राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी 1999 तारिक अनवर
13. तृणमूल कांग्रेस 1998 ममता पार्टी
14. आम आदमी पार्टी 2012 अरविंद केजरीवाल

संदर्भ

[1] https://web.archive.org/web/20191202145922/https://m.economictimes.com/news/politics-and-nation/6-national-parties-earned-rs-1200-crore-in-fy18/articleshow/67137504.cms

[2] https://web.archive.org/web/20191015054543/https://adrindia.org/content/analysis-income-expenditure-national-political-parties-fy-2017-2018

[3] सुब्रत के. मित्र तथा वी.बी. सिंह. 1999.भारत में लोकतंत्र व सामाजिक परिवर्तन : राष्ट्रीय मतदाताओं का एक गहन विश्लेषण. नई दिल्ली: सेज प्रकाशन. ISBN 81-7036-809-X (India HB) ISBN 0-7619-9344-4 (U.S. HB).

[4] सुब्रत के. मित्र, माइक एन्स्कट, क्लेमेंस स्पिएस (eds.). 2004. दक्षिण एशिया में राजनीतिक dal. ग्रीनवुड: प्रेजेर.

[5] Ellen Wilson and Peter Reill, Encyclopedia of the Enlightenment (2004), p. 298

[6] Richard Hofstadter, The Idea of a Party System: The Rise of Legitimate Opposition in the United States, 1780–1840 (1970)

International Journal of Trend in Scientific Research and Development
IJTSRD
International Journal of Trend in Scientific Research and Development
ISSN: 2456-6470